श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ-जयतः

वर्ष ६} श्रीगौराब्द ५२३ {संख्या १

वि. सं. २०६६, चैत्र मास, सन् २००९, १२ मार्च-९ अप्रैल

श्रीदशमूल-श्लोकाः

(जगद्गुरु-श्रील-सच्चिदानन्द-भक्तिविनोद-ठक्क

आम्नायः प्राह तत्त्वं हरिमिह परमं सर्वशक्तिं रसाब्धिम्
तद्भिन्नांशांश्च जीवान् प्रकृतिकवलितान् तद्विमुक्तांश्च भावाद्।
भेदाभेदप्रकाशं सकलमपि हरेः साधनं शुद्ध भक्तिम्
साध्यं तत्प्रीतिमेवेत्युपदिशति जनान् गौरचन्द्रः स्वयं सः॥१॥

अर्थात्, गुरु-परम्परा द्वारा प्राप्त वेद-वाणियोंको आम्नाय कहते हैं। वेद और वेदानुगत श्रीमद्भागवत आदि स्मृतिशास्त्र तथा वेदानुगत प्रत्यक्षादि प्रमाण ही प्रमाण स्वीकार किये गये हैं। इन प्रमाणोंसे यह सिद्ध है कि—(१) हरि ही परम तत्त्व हैं, (२) वे सर्व-शक्तिमान् हैं, (३) वे अखिल रसामृत-सिन्धु हैं, (४) मुक्त और बद्ध दोनों प्रकारके जीव ही उनके विभिन्नांश तत्त्व हैं, (५) बद्धजीव मायाके अधीन होते हैं, (६) मुक्त जीव मायासे मुक्त होते हैं, (७) चित् अचित् अखिल जगत् श्रीहरिका अचिन्त्यभेदाभेद प्रकाश है, (८) भक्ति ही एकमात्र साधन है और (९) कृष्ण-प्रीति ही एकमात्र साध्य वस्तु है॥१॥

स्वतःसिद्धो वेदो हरिदयितवेधःप्रभृतितः
प्रमाणं सत् प्राप्तं प्रमिति विषयान् तान्नव विधान्।
तथा प्रत्यक्षादिप्रमितिसहितं साधयति नः
न युक्तिस्तर्काख्या प्रविशति तथा शक्तिरहिता॥२॥

अर्थात् श्रीहरिक
हैं, वे आम्नाय-वाक्य कहे जाते हैं। वे आम्नायवाक्य अपने अनुगत प्रत्यक्षादि प्रमाणोंकी सहायतासे नौ प्रकारके प्रमेय-तत्त्वोंका साधन करते हैं। जिस युक्तिका तात्पर्य केवल तक
अचिन्त्य विषयोंका विवेचन करनेमें सर्वदा पंगु होती है। अतः अचिन्त्य तत्त्वके व्यापारमें तक
नहीं है॥२॥

हरिस्त्वेकं तत्त्वं विधिशिवसुरेशप्रणमितः
यदेवेदं ब्रह्म प्रकृतिरहितं तत्त्वनुमहः।
परात्मा तस्यांशो जगदनुगतो विश्वजनकः
स वै राधाकान्तो नवजलदकान्तिश्चिदुदयः॥३॥

अर्थात् ब्रह्मा, शिव और इन्द्र आदि देववृन्द जिनको निरन्तर प्रणाम किया करते हैं, वे हरि ही एकमात्र परमतत्त्व हैं। शक्ति-रहित निर्विशेष ब्रह्म उन श्रीहरिकी अंग-कान्ति हैं और जगत्की सृष्टि कर उसमें अपने एक अंशसे प्रविष्ट रहनेवाले सर्वान्तर्यामी परम-पुरुष परमात्मा—उन श्रीहरिके अंश मात्र हैं। वे श्रीहरि ही नव-जलधर-कान्तिसे युक्त चित्स्वरूप श्रीराधावल्लभ हैं॥३॥

पराख्यायाः शक्तेरपृथगपि स स्वे महिमनि
स्थितो जीवाख्यां स्वामचिदभिहितां तां त्रिपदिकाम्।
स्वतन्त्रेच्छाशक्तिं सकलविषये प्रेरणपरो
विकाराद्यैः शून्यः परमपुरुषोऽयं विजयते॥४॥

अर्थात्, अपनी अचिन्त्य पराशक्तिसे अभिन्न होते हुए भी भगवान् स्वतन्त्र इच्छामय हैं, वे परम-पुरुष स्व-महिम-स्वरूपमें नित्य स्थित होते हैं। चित्-शक्ति, जीवशक्ति और मायाशक्तिरूप तीन पदोंसे युक्त अपनी पराशक्तिको उपयुक्त विषयोंके सम्बन्धमें सर्वदा प्रेरणा करते हैं। ऐसा करते हुए भी स्वयं निर्विकार रहकर वे परम-तत्त्वरूप भगवान् अपने पूर्ण-स्वरूपमें नित्य विराजमान होते हैं॥४॥

स वै ह्लादिन्यायाः प्रणयविकृतेर्ह्लादनरत-
स्तथा सम्विच्छक्तिप्रकटितरहोभावरसितः।
तया श्रीसन्धिन्या कृतविशद तद्धामनिचये
रसाम्भोधौ मग्नो व्रजरसविलासी विजयते॥५॥

अर्थात् स्वरूप शक्तिकी तीन प्रकारकी वृत्तियाँ हैं—ह्लादिनी, सन्धिनी और सम्वित्। ह्लादिनीके प्रणय विकारमें कृष्ण सदा अनुरक्त रहते हैं, सम्वित् शक्ति द्वारा प्रकटित अन्तरङ्ग भावोंके द्वारा वे सर्वदा रसिक-स्वभाव हैं तथा सन्धिनी शक्ति द्वारा प्रकटित निर्मल वृन्दावन आदि धामोंमें स्वेच्छामय ब्रजरस विलासी कृष्ण नित्य-रससमुद्रमें निमग्न रहते हैं ॥५॥

स्फुलिङ्गाः ऋद्धाग्नेरिव चिदणवो जीवनिचयाः
हरेः सूर्यस्यैवापृथगपि तु तद्भेदविषयाः।
वशे माया यस्य प्रकृतिपतिरेवेश्वर इह
स जीवो मुक्तोऽपि प्रकृतिवशयोग्यः स्वगुणतः ॥६॥

जलती हुई अग्निसे जैसे अनेकों क्षुद्र चिनगारियाँ उड़ती हैं, ठीक उसी प्रकार चित्-सूर्य-स्वरूप श्रीहरिके किरण-कण स्थानीय चित् परमाणु-स्वरूप अनन्त जीव हैं। श्रीहरिसे अभिन्न होते हुए भी ये जीव उनसे नित्य भिन्न हैं। ईश्वर और जीवमें नित्य भेद यह है कि ईश्वर मायाशक्ति अर्थात् प्रकृतिके अधीश्वर हैं और जीव मुक्त अवस्थामें भी अपने स्वभावके अनुसार माया-प्रकृतिके अधीन होने योग्य होता है ॥६॥

स्वरूपार्थैर्हीनान् निजसुखपरान् कृष्णविमुखान्
हरेर्माया दण्ड्यान् गुणनिगडजालैः कलयति।
तथा स्थूलैर्लिङ्गैर्द्विविधावरणैः क्लेशनिकरै-
र्महाकर्मालानैर्नयति पतितान् स्वर्गनिरयौ ॥७॥

जीव स्वरूपतः कृष्णका नित्यदास है। कृष्णदास्य ही उसका स्वरूप-धर्म है। उस स्वरूप-धर्मसे रहित, अपने सुखकी चेष्टामें रत कृष्ण-विमुख जीवोंको दण्ड देनेके लिए भगवानकी मायाशक्ति उन्हें सत्त्व, रज और तमोगुण रूप जंजीरसे बाँध देती है और स्थूल तथा लिङ्ग (सूक्ष्म) शरीरसे जीव-स्वरूपको आच्छादित कर तथा दुःखपूर्ण कर्म-बन्धनमें डालकर स्वर्ग और नरकमें उन्हें सुख और दुःखको भोगाती फिरती है ॥७॥

यदा भ्रामं भ्रामं हरिरसगलद्वैष्णवजनं
कदाचित् संपश्यन् तदनुगमने स्याद् रुचियुतः।
तदा कृष्णवृत्त्यात्यजति शनकैर्मायिकदशां
स्वरूपं विभ्राणो विमलरसभोगं स कुरुते ॥८॥

अर्थात् संसारमें उच्च-नीच योनियोंमें भ्रमण करते-करते जब हरि-रसमें मत्त वैष्णवका दर्शन प्राप्त होता है, तब मायाबद्ध जीवमें वैष्णव-मार्गके प्रति रुचि उत्पन्न होती है। कृष्णनामका उच्चारण करते-करते धीरे-धीरे उसकी मायिक दशा दूर हो जाती है—जीव क्रमशः स्व-स्वरूप प्राप्त करता हुआ विमल कृष्ण-सेवा-रस आस्वादन करनेके योग्य हो जाता है ॥८॥

हरेः शक्तेः सर्वं चिदचिदखिलं स्यात् परिणतिः
विवर्त नो सत्यं श्रुतिमितिविरुद्धं कलिमलम्।
हरेर्भेदाभेदौ श्रुतिविहिततत्त्वं सुविमलं
ततः प्रेम्नः सिद्धिर्भवति नितरां नित्यविषये॥९॥

अर्थात् चिद्-अचित् समस्त जगत् कृष्ण-शक्तिकी परिणति है। विवर्तवाद सत्य नहीं है, बल्कि वह कलिकालका मल और वेद-विरुद्ध मत है। अचिन्त्य-भेदाभेद तत्त्व ही वेद-सम्मत विशुद्ध मत है। अचिन्त्यभेदाभेद तत्त्वसे ही नित्य तत्त्वके प्रति प्रेम-सिद्धि होती है॥९॥

श्रुतिः कृष्णाख्यानं स्मरणनतिपूजाविधिगणाः
तथा दास्यं सख्यं परिचरणमप्यात्मददनम्।
नवाङ्गान्येतानीह विधिगतभक्तेरनुदिनं
भजन् श्रद्धायुक्तः सुविमलरति वै स लभते॥१०॥

अर्थात् श्रवण, कीर्तन, स्मरण, वन्दन, पादसेवन, अर्चन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन—इस नवधा वैधी भक्तिका जो लोग श्रद्धापूर्वक प्रतिदिन अनुशीलन करते हैं, वे विमल कृष्णरति प्राप्त करते हैं॥१०॥

स्वरूपावस्थाने मधुररसभावोदय इह व्रजे राधाकृष्णस्वजनजनभावं हृदि वहन्।
परानन्दे प्रीतिं जगदतुलसम्पत् सुखमहो विलासाख्ये तत्त्वे परमपरिचर्यां स लभते॥११॥

अर्थात् साधन-भक्तिकी परिपक्व अवस्थामें जीव जब अपने स्वरूपमें अवस्थित हो जाता है, तब ह्लादिनी-शक्तिके प्रभावसे उसमें मधुर रसका भाव उदित होता है—अर्थात् उसके हृदयमें ब्रजमें श्रीराधाकृष्णके स्वजन-परिजनोंके अनुगत होनेका भाव उदित होता है। क्रमशः जगत्में अतुल सम्पद-सुख और विलासाख्य परानन्द तत्त्वकी सेवा भी उसे प्राप्त होती है। इससे बढ़कर जीवका कोई लाभ नहीं है॥११॥

प्रभुः कः को जीवः कथमिदमचिद्विश्वमिति वा
विचार्यैतानर्थान् हरिभजन-कृच्छास्त्रचतुरः।
अभेदाशां धर्मान् सकलमपराधं परिहरन्
हरेर्नामानन्दं पिबति हरिदासो हरिजनैः॥१२॥

अर्थात् कृष्ण कौन हैं? मैं (जीव) कौन हूँ? यह चिद्-अचिद् विश्व क्या है? इन विषयोंका विवेचनकर हरिभजन-परायण, शास्त्र-विषयमें कुशल व्यक्ति अभेदकी आशा, समस्त प्रकारके धर्म-अधर्म और अपराधोंका वर्जन कर सत्संगमें रहकर अपनेको हरिका दास समझते हुए हरिनामानन्दका आस्वादन करते हैं॥१२॥

संसेव्य दशमूलं वै हित्वाऽविद्याऽमयं जनः।
भावपुष्टिं तथा तुष्टिं लभते साधुसङ्गतः॥१३॥

अर्थात् इस दशमूलका सेवन करनेसे जीवका अविद्या रूप रोग जड़से दूर हो जाता है एवं तदनन्तर वह साधुसंग द्वारा भावकी पुष्टि और तुष्टि प्राप्त करता है॥१३॥

अभिधेय तत्त्व

[ॐ विष्णुपाद श्रील भक्तिविनोद ठाक

प्र. १—समस्त शास्त्रोंका अभिधेय क्या है?

उ.—"मैं क्या हूँ? यह जड़ ब्रह्माण्ड क्या है? भगवद् वस्तु क्या है? एवं हमारे परस्परमें क्या सम्बन्ध है?—इन चारों प्रश्नोंका सदर्थ पानेपर 'सम्बन्ध-ज्ञान' होता है। सम्बन्ध-ज्ञान प्राप्त पुरुष (व्यक्ति) का कर्तव्य है, यह परिज्ञात होकर (इसे भलीभाँति जानकर) उस कर्तव्य-अवलम्बनको ही समस्त शास्त्रोंका 'अभिधेय' जानना होगा।"

(अ. प्र. भा. आ ७/१४६)

प्र. २—'अभिधेय-तत्त्व' किसे कहते हैं?

उ.—सच्चरित्रताक

करना होगा—इसका नाम ही 'अभिधेय तत्त्व' है। यह तत्त्व वेदादि समस्त शास्त्रोंमें प्रबल रूपमें उल्लिखित हुआ है, इसलिए श्रीमन्महाप्रभु इसे अभिधेय-तत्त्व कहते हैं।" (जैवधर्म, अ. ४)

प्र. ३—बद्धजीवक

सिद्धि-प्राप्ति सम्भव है?

उ.—"साधन-कार्यको बद्धजीव अस्वीकार करनेसे नहीं होगा, परन्तु यत्नपूर्वक ग्रहण करना होगा। आदरपूर्वक जिस परिमाणमें साधन करेंगे, सिद्धि भी उस परिमाणमें निकटवर्ती होगी।"

('साधन', स. तो. ११/५)

प्र. ४—जीव और ईश्वरका नित्य सम्बन्ध किस प्रकार प्रकाशित होता है?

उ.—"जीव और ईश्वरमें एक निगूढ़ सम्बन्ध है। रागका उदय होनेपर उस सम्बन्धका परिचय प्राप्त होता है। वह सम्बन्ध नित्य है, किन्तु जड़बद्ध जीवक

घिसनेसे अथवा चकमक पत्थर घिसनेपर जिस प्रकार अग्नि प्रकट होती है, उसी प्रकार साधनक्रमसे वह सम्बन्ध प्रकाशित हो जाती है।"

(चै. शि. १/१)

प्र. ५—'सेवा' किसे कहते हैं?

उ.—"कृष्णानुशीलन ही एकमात्र क्रिया है, जिसे मुक्त अवस्थामें 'सेवा' कहा जाता है।"

(त. सू. ३३ सू.)

प्र. ६—भक्तियोग कितने प्रकारका है?

उ.—"भक्तियोग दो प्रकारका है—(१) श्रवण-कीर्तनादिरूप मुख्य-भक्तियोग एवं (२) श्रीकृष्णमें अर्पित निष्काम-कर्मरूप गौण-भक्तियोग।" (र. र. भा. २/४१)

प्र. ७—कर्ममार्गीय गौण-भक्तिपथ क्या है?

उ.—"वर्णाश्रमाचार अनुष्ठानक

हरितोषण-व्रत ही कर्ममार्गीय गौण-भक्तिपथ है।"

('नाम-माहात्म्य-सूचना', ह. चि.)

प्र. ८—स्वरूपसिद्धा भक्ति या शुद्धाभक्तिका लक्षण क्या है?

उ.—"क

कर्मार्पण श्रेष्ठ है, क

अर्थात् अपना वर्ण-धर्मत्याग-पूर्वक संन्यास-ग्रहण श्रेष्ठ है, उससे ब्रह्मानुशीलनरूप ज्ञानमिश्रा भक्ति श्रेष्ठ होनेपर भी ये सब बाह्य हैं;

क्योंकि साध्यवस्तु जो शुद्धभक्ति है, वह उन चार प्रकारक
सङ्गसिद्धा भक्ति कदापि शुद्धभक्तिक
परिचित नहीं होती, स्वरूपसिद्धा भक्ति एक पृथक् तत्त्व है। वह कर्म, कर्मार्पण, कर्मत्यागरूप संन्यास और ज्ञानमिश्रा भक्तिसे नित्य पृथक् है। उस शुद्धभक्तिक
ज्ञान-कर्मादिक
कृष्णानुशीलन। यही साध्यवस्तु है; क्योंकि साधनावस्थामें यह देखे जानेपर भी सिद्धावस्थामें यह निर्मलरूपमें लक्षित होती है।"

(अ. प्र. भा., म. ८/६८)

प्र. ९—महाजनका पथ क्या है?

उ.—"व्यास, शुक, प्रह्लाद, श्रीश्रीमहाप्रभु एवं उनक
महाजन-पथ है। उस पथका परित्यागकर हम नवीन अतिभक्तोंका उपदेश सुननेक
नहीं हैं।" ('प्रजल्प', स. तो. १०/१०)

प्र. १०—क्या परमार्थका पथ नित्य-नया सृष्ट हो सकता है?

उ.—"पथ नया नहीं होता है। जो पथ सनातन है, साधुगण उसीका अवलम्बन करते हैं। जो लोग दाम्भिक और यशोलिप्सु (यशक
लोग नया पथ आविष्कार करनेक
चेष्टा करते हैं। जिनका पूर्व भाग्य है, वे दाम्भिकताका परित्याग करते हुए पूर्व-पथका आदर करते हैं। जिनका भाग्य मन्द है, वे लोग नवीन पथपर अपनेको नचाकर जगत्की वञ्चना करते रहते हैं।" ('तत्तत्कर्मप्रवर्त्तन', स. तो. ११/६)

प्र. ११—पूर्व-महाजनोंका भजन-पथ क्या है?

उ.—"समस्त जीवोंक
दृढ़ताक
पूर्व-महाजनोंका भजन-पथ है।"

प्र. १२—ऐकान्तिक नामाश्रित भजन-पद्धतिका स्वरूप क्या है?

उ.—"साधन-भजनकी पद्धति अनेक प्रकार है; किन्तु क
प्रकारकी है। श्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुक
महाजनगण श्रीहरिदास द्वारा उक्त भजन-प्रणालीका अवलम्बन करते आये हैं। प्राचीन कालसे व्रजवनवासी समस्त वैष्णवोंने भी इस प्रणालीसे भजन किया है। श्रीपुरुषोत्तम क्षेत्रमें क
हमने अपनी आँखोंसे उनकी यह भजन-प्रणाली देखी है। निरपराध होकर निःसङ्गमें निरन्तर श्रीहरिनामका श्रवण, कीर्तन और स्मरण—यह एकमात्र ऐकान्तिक भजन-पद्धति है, श्रीहरिभक्तिविलासक
श्रीगोपालभट्ट गोस्वामी दोनोंने इसका स्पष्टरूपसे उल्लेख किया है।" ('प्रबोधिनी कथा', ह. चि.)

प्र. १३—वैष्णवधर्म क्या है?

उ.—"अधिकार-निष्ठाक
ही वैष्णवधर्म है।" ('साधुनिन्दा', ह. चि.)

प्र. १४—'ज्ञान' किस समय 'साधनभक्ति' हो सकती है?

उ.—"कर्मका अवान्तर (आनुषंगिक, गौण) फल 'भुक्ति' (भोग) है, ज्ञानका अवान्तर फल 'मुक्ति' है एवं इन दोनोंक
को समझना होगा। जिस स्थानपर ज्ञान भक्तिको ही चरम फलक
स्थानपर ज्ञान सोपाधिक (उपाधिक
भगवद्-बहिर्मुख है तथा जिस स्थानपर भक्तिको ही लक्ष्यकर ज्ञानकी चालना होती है, उस स्थानपर ज्ञानको 'साधनभक्ति' कहा जाता है।"

('अवतरणिका', र. र. भा.) (क्रमशः)

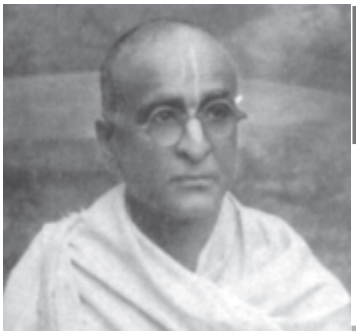

श्रील प्रभुपादका उपदेशामृत

(वर्ष ५, संख्या १२, पृष्ठ २७३ से आगे)

प्र. ४६०—हमारी रक्षा क

उ.—जो सब समय भगवानकी कथाओंकी विवेचना करते हैं, जो सम्पूर्णरूपसे भगवानक ऊपर निर्भरशील हैं, उनक
ग्रहण करना ही हमारे लिए रक्षा प्राप्तिका एकमात्र उपाय है। वे पतितपावन हैं, दीनबन्धु हैं। उनक शरणापन्न होनेपर वे अवश्य ही हमारी रक्षा करेंगे।

प्र. ४६१—हमें भगवानकी अनुभूति क होगी?

उ.—श्रीमन्महाप्रभुने कहा है—कृष्णसेवा, कार्ष्णसेवा (कृष्णभक्तोंकी सेवा) तथा नामकीर्तन—जीवक
वस्तुकी सेवा की जाय, वे ही नित्य सेव्य हैं और जो सेवा करते हैं, वे सेवक हैं। अतः सेवककी वृत्ति ही सेवा या भक्ति है। भगवान भजनीय वस्तु हैं, भजनकारी भक्त हैं तथा भजनकी वृत्ति ही भक्ति है। ये तीनों ही नित्य हैं। ये तीनों ही कालक
होने वाली वस्तुएँ नहीं हैं, पाँचभौतिक वस्तुओंकी भाँति जन्म-स्थिति-प्रलयक
भगवानकी सेवाक
करनेतक इन तीनोंकी उपलब्धि नहीं हो सकती। मिश्रा चेष्टा अर्थात् भक्तिक
आदिकी चेष्टासे भगवद्वस्तुकी उपलब्धि नहीं हो सकती।

यदि हम श्रेयःपथका वरण न करें, सर्वक्षण भगवानकी सेवामें ही व्यस्त न रहें, तो हम प्रेयपथको ही श्रेष्ठ मानकर नरकक
धावित होंगे। हम संसारक
रहे हैं कि हम विष्णुक
किन्तु वास्तवमें हम इन्द्रियोंक
स्त्री-पुत्र-कन्या आदिक
भोगी हैं। जबतक जीवोंकी भगवानक
अविमिश्रा या निष्काम सेवावृत्ति उदित नहीं होती, तबतक भगवानक
नहीं हुआ है, ऐसा जान लेना चाहिए। हमारे हृदयमें श्रीगौरसुन्दरकी कृपा प्रविष्ट न होनेक
हमारी ऐसी दुरवस्था हो रही है—हमारे हृदयमें इतनी दुर्वासनाएँ जग रही हैं।

जबतक हमें इसकी उपलब्धि नहीं हो जाती कि कृष्णसेवा तथा कार्ष्णसेवा हमारे लिए एकमात्र कृत्य है, तबतक हम वञ्चित ही रहेंगे। अपनी दुर्बुद्धिसे हम कब छुटकारा पा सकते हैं? जब हम निष्कपट होकर कार्ष्ण (कृष्णभक्तों) की शरण ग्रहण करेंगे।

जो निरन्तर भगवानकी उपासना करते हैं, उनक
द्वारा हमें भगवानका दर्शन सम्भव है। यदि नाटकमें नारदक

नारद मान लें, यदि चूनेक
तो हम ठगे जायेंगे। जो सब समय भगवानकी सेवाकी ही चेष्टा करते हैं, जो पग-पगपर सम्पूर्णरूपसे भगवानकी सेवा करते हैं, ऐसे किसी महापुरुषकी सेवा ही हमें शुद्ध कृष्णभजन प्रदान कर सकती है तथा हमें भगवानकी अनुभूति प्रदान कर सकती है।

जबतक हम मनोधर्मक
जड़ रूप-रससे आच्छन्न होकर इन्द्रियतर्पणमें ही व्यस्त हैं, तबतक भगवानकी उपलब्धि नहीं हो सकती। कृष्ण, भक्तकी अपनी सम्पत्ति हैं। अतः भक्त ही कृष्णको दे सकते हैं। भोगोंमें उन्मुख चित्तमें भगवानकी अनुभूति नहीं हो सकती। क
सम्भव है। अपनेको भगवानका सेवक मानकर सब समय उनकी सेवा करते-करते ही सेव्यकी अनुभूति या प्रकृष्ट ज्ञान प्राप्त हो सकता है। भक्तिपथमें या सेवापथमें ही सेव्य भगवानका दर्शन सम्भव है, अन्य किसी उपायसे नहीं।

प्र. ४६२—कृष्णप्राप्तिका अर्थ क्या है?

उ.—कृष्ण-प्राप्तिका तात्पर्य इस जड़ जगतसे सम्पूर्णरूपसे विरक्त हो जाना है। मुक्त होनेक
हृदयमें कृष्णका दर्शन ही कृष्णप्राप्ति है। जितनी भी प्राप्त करनेकी वस्तुएँ हैं, उनमें से कृष्ण ही सर्वश्रेष्ठ एवं अन्तिम प्राप्तिकी वस्तु हैं। प्रेमक
कृष्णकी प्राप्ति होती है। बिना प्रेम नाहि मिले नन्दलाला।

प्र. ४६३—कृष्णका आविर्भाव क्या है?

उ.—प्रत्येक जीवक
भाव है, उसमें पूर्णचेतनका पूर्ण प्रकाश ही कृष्णका आविर्भाव है। शुद्धचित्तमें कृष्णका उदय ही कृष्णका जन्म है। वर्तमान समयमें हमलोग जड़ विषयोंमें अभिनिविष्ट हैं। यदि हम किसी प्रकारसे उस जड़भावको, कर्ताभिमानको या विषयासक्तिको दूर कर सक
लेनेकी बुद्धि या संसारसे छुट्टी हो सकती है।

प्र. ४६४—क्या भगवान अचिन्त्य वस्तु हैं?

उ.—यह बात सत्य है कि भगवान श्रीकृष्ण अचिन्त्य हैं, किन्तु वे क
सेवोन्मुख चिन्त्य हैं। श्रीकृष्ण निर्गुण होनेपर भी गुणात्मा हैं, समस्त कल्याणमय गुणोंक
वे एक ही साथ चिद्-गुणोंसे गुणी हैं तथा मायिक गुणोंसे रहित होनेके कारण निर्गुण हैं। उनमें समस्त गुण हैं। वे ही सम्पूर्ण जगतके आधार हैं। जगत उनकी मूर्ति नहीं है, बल्कि जगतक
वे ही हैं।

इन्द्रियज्ञानक
उपलब्धि होती है, वह भोगकी वस्तु है। जगत कृष्ण नहीं है, बल्कि कृष्ण जगतक
हम उन्हें प्रणाम नहीं करेंगे अर्थात् जबतक हम अपना अहङ्कारका परित्याग नहीं करेंगे, तबतक हम उनक
वे कोई सीमाविशिष्ट वस्तु नहीं हैं। अतः हम उन्हें माप या भाग करक

प्र. ४६५—हम हरिकथा कहाँ सुनेंगे?

उ.—हरिभक्तोंक
चाहिए। जो सब समय भगवानकी सेवा करते हैं, उन साधुओंक
कथाओंको सुनते-सुनते हम भगवानकी शक्ति या उनकी महिमाको जान सकते हैं। हृदय देकर तेजस्वी साधुओंक
हमारे मनमें भी दृढ़ता आयेगी। जिससे हम क्रमशः श्रद्धा, रति तथा प्रेमभक्ति प्राप्तकर कृतार्थ हो सकते हैं। तब बाह्य जगतकी शक्ति हमें पराजित नहीं कर सकती।

आचार्य-केशरी श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीकी प्रबन्धावली

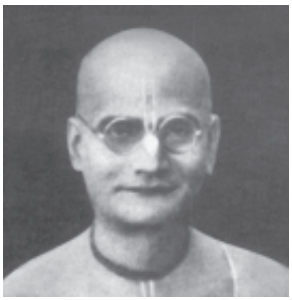

श्रीबदरिकाश्रम परिक्रमा

(वर्ष ५, संख्या १२, पृष्ठ २७६ से आगे)

हमलोग भगवत्ताक
श्रीरामचन्द्रकी चाण्डाल-पर्यन्त सभी प्राणियोंक ऊपर उनकी कृपाकटाक्षपातक
करते हैं। श्रीरामचन्द्रने कृपापूर्वक पशु-पक्षी, नर-वानर, देव-दानव सभीको अपनी सेवामें नियुक्त किया था। इस प्रकार उन्होंने सभी जीवोंक करुणाक
इसीलिए हम समस्त अवतारोंमें रामचन्द्र तथा बलरामजीको श्रेष्ठ अवतार मानते हैं। **श्रीकृष्ण एवं श्रीचैतन्य महाप्रभु अवतार नहीं हैं, अवतारी हैं।** वे दोनों एक ही तत्त्व हैं। अतः समस्त अवतार श्रीकृष्ण या श्रीचैतन्य महाप्रभुक
श्रीक
परतत्त्व-श्रीकृष्णक
नाम-महिमा वर्णनमें प्रकाशित हुआ है। यह अयोध्या-धाम भगवानक
मूर्ति श्रीरामचन्द्रका लीलाक्षेत्र है। भारतीय भौगोलिक क्षेत्रकी अवस्थितिका विचार करनेपर भी भक्तिकी सर्वश्रेष्ठता ही प्रतीत होती है। हम इस लोकक
अन्धकार रात्रिको पारकर प्रातः कर्मक
अधिष्ठान-क्षेत्र गयाको परित्याग कर आये हैं, यह पहले ही बताया जा चुका है। उसक
अत्यन्त ज्वालामय प्रखरतापसे तापित काशीक्षेत्रको दोपहरक
अपराह्न बेलामें अयोध्या-धामका स्मरण करते-करते क्रमशः अग्रसर हुए। क्रमशः और भी अनेक स्टेशनोंको पारकर हमलोग लक्ष्मणावती स्टेशनपर पहुँचे। उस समय शामक
थे। तीव्र गतिसे चलनेक
समयसे पहले ही पहुँच गयी थी। इस लक्ष्मणावती महानगरीका वर्तमान नाम लक्ष्नौ (लखनऊ) है। इस स्टेशनपर गाड़ी सबसे अधिक समयतक रुकती है। और फिर गाड़ी भी अपने निर्धारित समयसे पहले ही पहुँच गयी थी। अतः हमारे प्रायः अधिकांश यात्री गाड़ीसे उतरकर स्टेशनक
घूमने लगे। क्योंकि २२-२३ घण्टे लगातार गाड़ीमें बैठे रहनेक
बाहर आकर खुला आकाश एवं हवा पाकर सभी लोग बहुत आनन्दित हुए। पूर्वभारतक कम्पनी (E. I. R.) का यह स्टेशन अतीव सुन्दर है। दूरसे इसक
ताजमहलक

उसी समय पुजारीने घण्टा बजाया तथा सन्ध्या आरती आरम्भ हो गयी। लोग आरती दर्शन करनेक लिए हमारे डिब्बेक
देखते ही देखते प्लेटफार्म पर उपस्थित सभी लोगोंने हमारे डिब्बेको चारों ओरसे घेर लिया। लखनऊ युक्त-प्रदेश (वर्तमान नाम उत्तरप्रदेश) का प्रधान नगर है। अतः यह स्थान उच्च शिक्षित लोगोंका स्थान है। इसलिए रेल स्टेशनपर भी ऐसे लोगोंकी बहुत भीड़ लग गयी। घण्टीकी आवाज सुनकर ही वे लोग एकत्रित हो गये थे। आरती आरम्भ होनेक साथ-साथ नारायण महाराजने कीर्तन आरम्भ कर

दिया—"जय जय गौराचाँदेर आरतिको शोभा" इत्यादि (श्रीभक्तिविनोद ठाक
सत्यविग्रह और पूर्णानन्द मृदङ्ग बजा रहे थे। उस समय श्रीमन्महाप्रभुक
आकर्षित कर लिया था। क्योंकि पुजारीने श्रीमन्महाप्रभुक
सोनेक
सिरपर मोरपंखयुक्त मुक
गलेमें विविध रत्नमण्डित स्वर्णहार, चरणोंमें नूपुर तथा शरीरमें अन्यान्य दिव्य अलङ्कार दर्शकमण्डलीका चित्त हरण कर रहे थे। उस समय श्रीमन्महाप्रभुकी अङ्गकान्ति सुवर्णज्योतिक
मिलकर अतीव चमत्कारमय उज्ज्वल ब्रह्मज्योति प्रकाशित हो रही थी। सौभाग्यवान् व्यक्तियोंने दिव्यदृष्टिसे श्रीमन्महाप्रभुक
दर्शनकर अति सौभाग्य प्राप्त किया। यही श्रीमन्महाप्रभुक
है। **"यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः।"** यह जानकर कि यहाँपर गाड़ी अधिक समयतक रुक
धीरकृष्ण भी भावपूर्वक बहुत देरतक आरती करते रहे।

उस समय स्टेशनपर उपस्थित सभी लोग अपनेको धन्यातिधन्य मान रहे थे। सभी लोग हाथ जोड़कर खड़े होकर अपलक नेत्रोंसे श्रीविग्रहका दर्शन कर रहे थे। उनमेंसे क
हमारे कक्षक
६ हाथ लम्बे तथा २ हाथ चौड़े लाल कपड़ेका बैनर बँधा हुआ था, जिसमें हिन्दीमें "श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति, नवद्वीप (पश्चिम बङ्गाल)" लिखा हुआ था। उस बैनरको देखकर सभी लोग हमारा परिचय जान चुक
हमसे समितिक
बाद "संसार-दावानल-लीढ़लोक" श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाक
कीर्तन आरम्भ हुआ। उसी समय गाड़ीकी घण्टी बज उठी तथा गाड़ी छूटनेका संक
यात्री शीघ्र ही अपने-अपने स्थानोंपर बैठ गये। तब गाड़ी चल पड़ी तथा हमलोग सन्ध्या-कीर्तन आदि समाप्तकर लक्ष्मणावतीक
करने लग गये।

यह लक्ष्मणावती नगर रामानुज श्रीश्रीलक्ष्मणक द्वारा प्रतिष्ठित है। त्रेतायुगसे ही यह महानगरी लक्ष्मणावतीक
राजाओंक
शासनक
महानगरी अति मनोरम सौन्दर्यक

प्राकृतिक सौन्दर्यसे मुग्ध जीवोंक
सौन्दर्य तत्त्वका विकाश चिरदिनक
(घूंघटसे आवृत) रहता है। प्राकृत सौन्दर्य अप्राकृत सौन्दर्यकी छाया है। छायामें मूल-कायाकी पूर्ण छवि निर्विशेष-भावसे प्रतिफलित होती है। प्राकृत कवि उसमें ही मुग्ध होकर प्रकृतिक अन्तर्गत जगतक
तथा परिवर्तनशीलतामें ही आबद्ध होकर क्लेश अनुभव करते हैं। इसलिए हमलोग प्राकृतिक सौन्दर्यकी उपेक्षाकर लक्ष्मणावतीमें श्रीरामचन्द्रक प्रति लक्ष्मणक
थे। भगवानकी उपासनाका क्रमविकाश ही हमारी विवेचनाका मुख्य विषय था। सेव्यकी अपेक्षा सेवक-तत्त्वकी प्रधानता ही वैष्णव-तत्त्वमें प्रस्फ
जितना ही अग्रसर हुआ जाय, उसका क्रमविकाश हृदयको उतना ही आनन्दमें डुबो देता है। इसलिए सेव्य-तत्त्व (श्रीरामचन्द्र) की आविर्भाव-भूमि अयोध्याको अतिक्रमकर सेवाविलास (लक्ष्मण) क क्षेत्र लक्ष्मणावतीमें पहुँचनेपर हमें विशेष आनन्दकी अनुभूति हुई। हमारे और अग्रसर होनेपर सेवाक और भी उन्नततम स्थानसमूह हमारे मार्गमें आयेंगे।

(क्रमशः)

ॐ विष्णुपाद १०८श्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराजजीकी पत्रावली

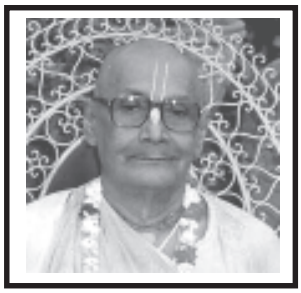

आश्रय-विग्रह श्रीगुरुदेव भगवत्-स्वरूप हैं

श्रीश्रीगुरुगौराङ्गौ जयतः

श्रीगोलोकगञ्ज गौड़ीय मठ
पो-गोलोकगञ्ज (धुबड़ी), असम
तारीख ६/६/१९७२

स्नेहास्पदासु—

× × श्रीगुरु-वैष्णव-भगवान्—ये तीनों ही अन्तर्यामी हैं। ये सत्यद्रष्टा, सत्यवाक् हैं। जीवकी बुद्धिक अगोचरमें ये बद्धगणक
जीव इनकी असमोर्द्ध करुणाका क
हैं, साधक-साधिकाक
मनोवासनाएँ पूर्ण करते हैं एवं इस प्रकारसे साधन-भजनक
भजनमें ऐकान्तिक और एकनिष्ठ न होनेपर वास्तव फलप्राप्तिकी सम्भावना कहाँ है? **"उत्तम हञा आपनारे माने तृणाधम"** अर्थात् "उत्तम होकर भी अपनेको तृणसे अधम मानते हैं"—यह विचार ही श्रीगुरु-भगवान्की कृपाप्राप्तिकी योग्यता या मापदण्ड है। भक्तिवृत्तिका उदय न होनेपर 'अयाचित कृपाका' क्या कोई क्षेत्र है? अहैतुकी करुणा किसी शर्त्तक
वह लभ्य नहीं है। **"योग्यता विचारे किछु नाहि पाइ, तोमार करुणा सार"** अर्थात् "योग्यताका विचार करेंगे, तो मैं क
दैन्यबोधक प्रार्थना है। श्रीगुरु-भगवान्को पानेक
स्वभाव-सुलभ दैन्य प्रकाश करनेमें अभ्यस्त हैं एवं यही उनका सद्गुण या साधन-सम्पत्ति है तथा यही भक्तकी बहादुरी है।

प्राकृत दम्भ-अहङ्कार रहनेपर 'अहैतुकी कृपा'का अनुभव नहीं होता है। फलस्वरूप सेवाकी अभिलाषा पूर्ण नहीं हो सकती, अन्तर्यामित्वका अनुभव नहीं हो सकता। जड़-अभिमानसे ग्रस्त होनेपर ही जीव 'मेढ़कका फट जाना' [१] विचारसे आबद्ध होकर धरतीको मिट्टीका एक ढेला मानने लगता है। किन्तु आश्रितजन भक्तिक

---

[१] एक मेढ़क हाथीक
गया था।

असमोर्द्ध करुणासे उद्भासित होते हैं। **"अशोक अभय अमृत-आधार तोमार चरणद्वय। ताहाते एखन विश्राम लभिया छाड़िनु भवेर भय॥"** अर्थात् "आपक
आधार हैं। उनका आश्रय लेनेपर मेरा संसार-भय दूर हो गया॥" यही सेवानिष्ठ भक्तकी कातर प्रार्थना है। "श्रीगुरु-वैष्णव-भगवान्—तिनेर स्मरण। तिनेर स्मरणे हय विघ्न-विनाशन॥" अर्थात् "श्रीगुरु, वैष्णव, भगवान्—इन तीनोंका स्मरण करना चाहिए। तीनोंक
इनक
दूर हो जाती हैं। जो लोग निष्कपट रूपसे श्रीगुरु-भगवान्क रत हैं,
उनमें दम्भ-अहङ्कार रह नहीं सकता है; वे लोग अमानी-मानद धर्ममें दीक्षित होनेक
उन्होंने समस्त भजन-प्रतिक **"वैष्णवेर गुणगान करिले जीवेर त्राण"** अर्थात् "वैष्णवोंका गुणगान करनेसे जीवका उद्धार होता है"—इस वाक्यक
लोगोंकी वन्दना-स्तुति-स्तव करनेकी आवश्यकता है, यद्यपि गुरु-वैष्णवगण **"स्वेनैव लाभेन समं प्रशान्तम्।"** सद्गुरु-पदाश्रयी व्यक्तिक
प्रतिष्ठित होकर ही गुरुकरणक
समस्त प्रकारक Near & Dear Ones क्यों न हो, उन लोगोंको 'स्वजनाख्य दस्यु' (स्वजन नामधारी लुटेरे) जानकर छोड़ देते हैं। भजनपथ पर चलनेक
अवश्य ही सावधान रहना होगा, किन्तु पीछे हटनेपर नहीं चलेगा। **"अपराधशून्य हइया लह कृष्णनाम"** अर्थात् "अपराधरहित होकर कृष्णनाम लीजिए"—यही श्रीमन्महाप्रभुका उपदेश है। **"निरपराधे नाम लैले पाय प्रेमधन"**, **"प्रेमधन बिना व्यर्थ दरिद्र जीवन"**—इसीलिए साधु-शास्त्र-गुरुनिन्दासे दूर रहनेक
उपदेश दिया गया है। प्राथमिक अवस्थामें अपराधयुक्त नाम होनेपर भी श्रीनामप्रभुकी कृपासे समस्त अपराध दूर हो जाते हैं।

"गुरु माता, गुरु पिता, गुरु हन पति"—इस महाजन-वाक्यमें सिद्धान्त-विरोध या रसाभास-दोष नहीं है। गुरुदेव आश्रय-विग्रह हैं, श्रीभगवान्की प्रेष्ठा सेविका हैं। श्रीगुरुतत्त्व शक्ति या प्रकृति हैं, श्रीभगवान्की सेवाशिक्षा ही उनक
विषय-विग्रह भोक्ता-भगवान्क **"छोड़त पुरुष-अभिमान, कि हइलुँ आजि कान। वरज-विपिने सखीसाथ, सेवन करबुँ, राधानाथ"**—यही सिद्धगणका स्वरूप है। बाहरमें पुरुष-वेश रहनेपर भी वे गोपीभावप्राप्त सखी या दासी हैं। अप्राकृत नवीनमदनक
सहायता करना ही उनकी एकमात्र सेवा है।

श्रीगुरुदेवको भगवत्स्वरूप जानना होगा, किन्तु जब स्वयं भगवान् ही गुरुरूपमें अवतीर्ण होते हैं, तब वे विषयविग्रहरूपमें अधिष्ठित होते हैं। आश्रयविग्रहक
परमसेवनीय वस्तु हैं। इस क्षेत्रमें गुरुको 'पति' कहनेपर भूल क्यों होगी? गुरु—एक अखण्ड तत्त्व हैं, किन्तु इस तत्त्वविचारमें वैशिष्ट्य या चमत्कारिता है। अन्तर्यामी, चैत्त्य, महान्त गुरुभेदमें विविध विचार हैं। अतः उस अखण्ड पूर्णतत्त्वक प्रति लक्ष्य रखकर आश्रयविग्रहरूपमें लीलाप्रकाशकारी विषयविग्रह

पुरुषोत्तम श्रीकृष्णचन्द्रको 'पति' कहनेपर दोष नहीं है। गुरुतत्त्वकी विभिन्न दिशाओंका विचारकर ही वैष्णव-महाजनने इस पदकी रचना की है।

पुनः पिता-माताकी जो स्नेह-ममता है, उससे पति-पत्नीका प्यार भिन्न है। पुत्रकन्या जितने भी वयोज्येष्ठ (बड़े) क्यों न हों, माता-पिताकी दृष्टिमें वे स्नेहक

पति-पत्नीक

'एकप्राण एकात्मा' होनेपर भी उच्च-नीच भाव है, वात्सल्यभावमें भी कनिष्ठ और ज्येष्ठका लाल्य-पाल्य भाव है। किन्तु मधुर-रतिमें कोई व्यवधान नहीं है, यद्यपि क उसमें आरोपित हुए हैं। **"सेव्य-सेवक-सम्भोगे द्वयोर्भेदः क विप्रलम्भे तु सर्वस्य भेदः सदा विवर्द्धते॥"** (अर्थात् जब सेव्य अर्थात् भोक्ता भगवान् अपने भोग्य सेवकको उसक होकर सम्यक् रूपसे भोग मिलित कहाँ रहता है? अर्थात् उनमें करते हैं, तब उनमें भेद ही दूसरी ओर, विप्रलम्भ अर्थात् अभेद ही माना जाता है। सबमें भेद विशेषरूपसे विरह उपस्थित होनेपर उन उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है।) इसमें पति-पत्नीका एकत्व—समत्व प्रमाणित हुआ है। इसीलिए श्रीराधा-आलिङ्गित-विग्रहमें श्रीराधाराणीक

रहनेपर श्रीराधा अपने चरणोंमें तुलसी ग्रहण करनेक

"जड़जगतमें ही स्त्री-पुरुषमें भेद है। गोलोक - वृन्दावनमें पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण ही एकमात्र पुरुष हैं, अन्य सभी उनकी शक्ति या सेविका हैं।"

पुनः देखो,—जड़जगतमें ही स्त्री-पुरुषमें भेद है। गोलोक-वृन्दावनमें पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण ही एकमात्र पुरुष हैं, अन्य सभी उनकी शक्ति या सेविका हैं। गीताशास्त्रमें जीवको शक्ति कहा गया है, अतः यह गुणवाचक विशेष्य अर्थात् श्रीभगवान्का गुण या क्रिया है। अतः यह जीव कदापि भोक्ता नहीं हो सकता है। प्राकृत विश्वमें नारी या स्त्रीकी तीन अवस्थाएँ स्वीकृत हैं—कन्या, जाया (पत्नी) एवं माता। इन तीन अवस्थाओंमें विशेषताएँ और भेद हैं। कन्या और मातामें परस्परका वात्सल्य स्नेह एवं जायामें मधुर-रसका आविर्भाव है। दास्य, सख्य, वात्सल्य, मधुर रतिमेंसे प्रत्येकमें दास्यभाव है, किन्तु प्रत्येक रस विशेषताओंसे युक्त है। अतः अखण्ड पूर्ण गुरुतत्त्वक

होगा कि वह विषय-विग्रहक

लक्ष्य है। साधनामें पूर्णता न आनेपर भगवान् बहुत दूर होते हैं, इसक

× × × × इति—

नित्यमङ्गलाकांक्षी—

श्रीभक्तिवेदान्त वामन

श्रीबृहद्भागवतामृतकी महिमा

[ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशत श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीक तारीख— ६ फरवरी, १९९२; स्थान : श्रीक]

कल श्रीबृहद्भागवतामृत पर लगभग दो वर्षों तक चर्चा करनेक
कर लिया है, परन्तु एक प्रकारसे हम इसको प्रारम्भ ही कर रहे हैं। यदि हम इस ग्रन्थमें प्रस्तुत सिद्धान्तोंको अपने अन्तरमें स्थापित कर सक
दैनिक जीवनमें पालन कर सक
रूपसे सफल हो जाएगा। अपने गुरु जैमिनी ऋषिसे इन उपाख्यानोंका श्रवणकर जनमेजयका जीवन पूर्णतः सफल हो गया। यदि हम इस कथाका उसी प्रकार श्रवण करें जिस प्रकार उन्होंने किया, एवं उसमें प्रस्तुत उपदेशोंका पालन करें तो हमारा जीवन भी उसी प्रकार सफल हो जाएगा। परन्तु यदि यह कथा हमारे कर्णोंमें प्रवेश करती है तथा हमारे हृदयमें प्रवेश किए बिना उसी प्रकार निकल जाती है जिस प्रकार ध्वनि किसी दीवारसे टकराकर पुनः लौट आती है, तो हमें कोई विशेष लाभ नहीं होगा। दुर्भाग्यवशतः हममेंसे अनेक व्यक्तियोंक
यही स्थिति है। परन्तु मुझे लगता है कि हमने इस उत्कृष्ट ग्रन्थमें प्रवेश करनेका क
विशेषकर मुझे यह अनुभव हुआ है कि किस प्रकार श्रीबृहद्भागवतामृतम् एक अभूतपूर्व साहित्य है। यदि कोई श्रीमद्भागवतम्को वास्तवमें समझता है तो उसने पहले अवश्य ही इस ग्रन्थका अध्ययन किया है। यदि कोई वास्तवमें साधनमें रत है तो उसने इस ग्रन्थका अध्ययन किया है। यदि कोई रस सहित भक्ति तत्त्वसे, विशेषकर व्रजप्रेमसे सुपरिचित है, तो उसने इस ग्रन्थका अवश्य ही सावधानीपूर्वक अध्ययन किया है।

श्रील सनातन गोस्वामी मात्र एक सन्त नहीं, अपितु श्रीभगवानक
साधारण परिकर नहीं हैं। वे अत्यन्त उन्नत एवं श्रीकृष्णक
श्रीकृष्णको भी कर्तव्य-अकर्तव्यका उपदेश दे सकते हैं। उनकी श्रीबृहद्भागवतामृतक
ही एक परिव्राजककी कथा है जिसका कोई स्थायी निवास नहीं होता एवं जो जीवनक
भ्रमण करता रहता है। प्रथम खण्डमें यह परिव्राजक श्रीनारद ऋषि हैं तथा द्वितीय खण्डमें गोपक
खण्डमें श्रीनारद ऋषि यह निश्चित करनेक
निकलते हैं कि किसपर श्रीकृष्णकी सर्वाधिक कृपा है। वे सर्वप्रथम प्रयाग गये, फिर दक्षिण भारतमें एक राजाक पास और फिर क्रमशः इन्द्र, ब्रह्मा, शंकर, श्रीप्रह्लाद महाराज, हनुमान, पाण्डव, द्वारिकामें उद्धव एवं अन्ततः नव-वृन्दावनक
पराकाष्ठा पर पहुँचती है। वहाँपर यह प्रकाशित होता है कि गोपियाँ श्रीकृष्णक
श्रीमती राधिका सर्वश्रेष्ठ गोपिका हैं। उनकी श्रीमूर्त्तिका दर्शनकर श्रीकृष्ण उन्मत्त हो गये थे। जब श्रीकृष्ण श्रीराधिकाका दर्शन करते हैं, उनका सौन्दर्य तथा माधुर्य अपनी चरम सीमा तक अभिवर्धित हो उठता है। अतः श्रीनारदने निष्कर्ष निकाला कि तीनों लोकोंमें यदि कोई श्रीकृष्णको सर्वप्रिय हैं तो वे श्रीमती राधिका ही हैं।

द्वितीय खण्डमें गोपक
हैं, कैसे उन्होंने आध्यात्मिक जीवनके प्रथम सोपानसे

चरम लक्ष्य तक प्रगति की। वे श्रीगोवर्धनमें गोप जातिमें जन्मे थे एवं तनिक भी शिक्षित न थे। एक दिन वे एक ऐसे व्यक्तिसे मिले जो एक महान भक्त थे, परंतु उन्हें इसका ज्ञान न था। उन्होंने उन भक्तको दूध, दही एवं मक्खन देकर एवं उनक
लाकर उनकी सेवा करना आरंभ कर दिया। फिर एक दिन उन भक्तने अत्यन्त प्रेमपूर्वक उसे श्रीगोपाल मन्त्र प्रदान किया एवं उसक
मन्त्र ऐसा मन्त्र है जो पूर्ण-सिद्धि प्रदान कर सकता है; क
गोपक
मन्त्रकी महिमाकी व्याख्या करने एवं उसे जपनेकी विधिका उपदेश किये बिना, उसक
गिर पड़े। तथापि गोपक
उसे पूर्ण विश्वास था कि वह मन्त्र उसे समस्त आध्यात्मिक सिद्धिका फल प्रदान करेगा। एक शिष्यका उसक
चाहिए; अन्यथा उसक
स्थापित बीजमें वृद्धि नहीं होगी। अनेक बार भक्त यह प्रश्न करते हैं कि इस मन्त्रका अर्थ क्या है तथा इसक जपकी विधि क्या है आदि। मैंने स्वयं अपने गुरुपादपद्म श्रील भक्तिप्रज्ञान क
महाराजसे यह प्रश्न किया था तथा उन्होंने उत्तर दिया, "मात्र इतना जानो कि यह मन्त्र सर्वसिद्धि प्रदान करनेमें समर्थ है; अन्य सभी क
प्रकट कर दिया जाएगा।" अतः एक शिष्यको क
पूर्ण श्रद्धापूर्वक मन्त्रका जप करना चाहिए और तभी उसका भजन ठीक होगा।

अपने मन्त्रको श्रद्धापूर्वक जपनेसे गोपक सिद्धिपथपर एकक
जैसे जैसे साधक प्रगति करता है, उसकी भक्तिकी तुलना एक कमल-पुष्पसे की जाती है जो क्रमशः विकसित एवं सुगन्धयुक्त हो रहा हो। ज्यों-ज्यों वह प्रगति करता है, अनुभव करता है कि उसका आध्यात्मिक आनन्द प्रत्येक सोपानपर परिवर्द्धित हो रहा है एवं वह यह देख सकता है कि किस प्रकार उसका भक्ति-कमल क्रमशः विकसित होकर अधिकाधिक सुन्दर एवं सौरभयुक्त होता जा रहा है। परन्तु यदि कोई साधक अपनी साधनाका उद्देश्य अपने मनमें नहीं रखता है तो ऐसा प्रतीत होगा कि क
है। जिस प्रकार जब कोई व्यक्ति भोजन करता है तो वह तुष्टिका अनुभव करता है एवं क
पुनः भोजन करनेकी इच्छा अनुभव करता है, उसी प्रकार साधनक
फल होगा। परन्तु यदि हम साधनका ठीक प्रकारसे अनुशीलन नहीं कर रहे, हमें फल प्राप्त नहीं होंगे। इसी कारण अनेक व्यक्ति इस मार्गको अपनाते हैं, परन्तु क
उदाहरणार्थ एक बीज रोपा जाता है एवं ज्यों-ज्यों उस बीजको सींचा जाता है, उसमें वृद्धि होती है, तथा उसक
भी उग जाते हैं। यदि ठीक प्रकारसे पोषित नहीं हुआ, तो वह बीजांक
वृद्धि रुक जाएगी, जबकि जंगली घास-पातोंमें वृद्धि होती रहेगी। उसी प्रकार नाम-भजनमें रत एक भक्त यदि अपने हृदयमें स्थित समस्त सांसारिक कामनाओंक
कामनाएँ और प्रबल हो जाएँगी और अन्ततः उसकी भक्ति-लताको आवृतकर उसे नष्ट कर देंगी। यदि भक्त "मुझे धन चाहिए, मुझे धन चाहिए", यह सोचते हुए "हरे कृष्ण हरे कृष्ण" रटता है, उसकी भक्ति-लता नष्ट हो जाएगी। इनमेंसे क
हमारे अन्तरमें गहनतासे छिपी रहती हैं एवं हम उनक विषयमें बोलने तकमें लज्जा अनुभव करते हैं। सावधान! यदि तुम साधन-भजन करना चाहते हो, तो गोपक
अस्तित्वक
भी कामनाको आश्रय नहीं देना चाहिए। (क्रमशः)

श्रीगौराङ्ग-सुधा

(वर्ष ५, संख्या १२, पृष्ठ २८४ से आगे)

इस प्रकार सभी भक्तलोग आनन्दपूर्वक प्रभु श्रीगौरसुन्दरसे मिलनेकी उत्कट उत्कण्ठासे नीलाचलकी ओर चल पड़े। उनक श्रीजगन्नाथजीकी रथयात्राका दर्शन तो गौण था, वास्तवमें वे तो अपने प्राणनाथ श्रीगौरसुन्दरसे मिलनेक सबक ही सबका कर भी चुका रहे थे तथा उनक खाने-पीने तथा रहनेकी व्यवस्था कर रहे थे। श्रीवास पण्डितक साथ उनकी पत्नी मालिनी देवी, श्रीअद्वैताचार्यक चन्द्रशेखर आचार्यक थीं। प्रभुक जाय। वे प्रभुको भिक्षा देनेक प्रभुकी प्रिय वस्तुएँ लेकर जा रही थीं। चलते-चलते वे लोग रेमुणा नामक स्थानमें पहुँचे। वहाँपर सभीने श्रीक्षीरचोरा गोपीनाथजीका दर्शन किया। गोपीनाथजीका दर्शनकर श्रीअद्वैताचार्यजी आनन्दपूर्वक नृत्य-कीर्तन करने लगे। गोपीनाथजीक पहचानते थे, (जब प्रभु संन्यास लेकर पुरी जा रहे थे, तो उस समय नित्यानन्द प्रभु भी उनक थे। उस समय यहाँपर पहुँचकर प्रभुने प्रेमाविष्ट होकर गोपीनाथजीक था। प्रभुक सभी निवासी तथा पुजारी आश्चर्यचकित हो गये थे। उन्हें विश्वास हो गया था कि श्रीमन्महाप्रभु कोई साधारण संन्यासी नहीं हैं, बल्कि स्वयं कृष्ण ही हैं। अतः उन लोगोंने प्रभु एवं उनक आदर-सत्कार किया। उस दिन प्रभुने अपने भक्तोंक विश्राम किया था तथा उन्हें माधवेन्द्र पुरीकी कथा सुनाई कि किस प्रकार श्रीमाधवेन्द्रपुरीकी भक्तिक वशीभूत होकर श्रीगोपीनाथजीने उनक चोरी की थी, जिससे उनका नाम ही हो गया—श्रीक्षीरचोरा गोपीनाथ।) अतः उन लोगोंने नित्यानन्द प्रभु एवं अन्यान्य सभी भक्तोंका बहुत ही आदर किया। उस रात वे लोग वहींपर ही रह गये और पुजारी बारह मिट्टीक आये तथा आदरपूर्वक श्रीनित्यानन्द प्रभुको प्रदान किया। नित्यानन्द प्रभुने वह क्षीर सभी भक्तोंमें बाँट दी। श्रीगोपीनाथजीका क्षीर प्रसाद पाकर भक्तलोग बहुत ही आनन्दित हुए। जब सबने प्रसाद पा लिया, तो नित्यानन्द प्रभुने उन्हें माधवेन्द्रपुरीकी कथा, गोवर्धनमें गोपालजीका प्राकट्य, गोपालजीका उनसे चन्दन मांगने तथा गोपीनाथजीक कथा जो उन्होंने पहले प्रभु श्रीगौरसुन्दरसे सुनी थी, उन सभीको सुनाई। उस अद्भुत कथाको सुनकर भक्तलोग आनन्दविभोर हो गये।

इस प्रकार वहाँसे आगे चलते हुए वे लोग कटक पहुँचे तथा वहाँपर उन लोगोंने श्रीसाक्षीगोपालजीका दर्शन किया। उस रात वे वहींपर रह गये तथा नित्यानन्द प्रभुने उन्हें श्रीसाक्षीगोपालजीकी कथा सुनाई। साक्षीगोपालजीकी कथा सुनकर वैष्णवलोग परमानन्दित हुए। अब नीलाचल निकट आ जानेक कारण प्रभुसे मिलनेकी भक्तोंकी उत्कण्ठा और भी बढ़ गयी। उन्हें एक-एक पग एक-एक योजनक समान प्रतीत हो रहा था। इस प्रकार उत्कण्ठित होकर तीव्रगतिसे चलते हुए जब वे आठारनालापर पहुँचे, तो भक्तोंक
श्रीगौरसुन्दरने अपने सेवक गोविन्दक
नित्यानन्द प्रभु एवं अद्वैताचार्यजीक
भेज दीं। जब गोविन्द वहाँपर पहुँचे तथा उन्होंने दोनों प्रभुओंको प्रणामकर महाप्रभुक
मालाएँ पहनाईं, तो नित्यानन्द प्रभु एवं अद्वैताचार्य प्रभु बहुत ही आनन्दित हुए। आनन्दविभोर होकर वे दोनों नाचने-गाने लगे। वहाँसे सभी भक्तलोग कीर्तन एवं नृत्य करते हुए श्रीमन्महाप्रभुक
चल पड़े। जब वे लोग नरेन्द्र सरोवरक
प्रभुने उन लोगोंका स्वागत करनेक
दामोदर एवं अन्यान्य भक्तोंको माला लेकर भेज दिया। नरेन्द्र सरोवरपर आकर स्वरूप दामोदरजीने दोनोंको माला पहनाई। वहाँसे प्रेमविह्वल हो नृत्य-कीर्तन करते हुए जब भक्तलोग सिंहद्वारपर पहुँचे, प्रभु स्वयं ही भक्तोंसे मिलनेकी उत्कण्ठासे दौड़ते हुए सिंहद्वारपर आ गये तथा वहींपर सबसे प्रेमपूर्वक मिले। तत्पश्चात् सभीको साथ लेकर श्रीजगन्नाथजीक
करनेक
निवासस्थानपर आ गये।

भक्तोंक
तथा वाणीनाथ सबक
ले आये तथा आनन्दपूर्वक स्वयं अपने हाथोंसे ही सबको खिलाया। भोजनक
अनुसार ही सबको उनक
लिए भेज दिया गया। इस प्रकार भक्तलोग चार महीने पुरीमें ही रहकर प्रभुक
एवं कीर्तन करते रहे। जब रथयात्राका समय उपस्थित हुआ, तो पूर्व वर्षकी ही भाँति प्रभुने सभी भक्तोंको साथ लेकर गुण्डिचा मन्दिर मार्जन किया। क गाँववासियोंने प्रभुको श्रीजगन्नाथजीक
खींचनेकी डोरी प्रदान की। इस वर्ष भी प्रभुने प्रतिवर्षकी ही भाँति अपने गणोंको साथ रथक
नृत्य-कीर्तन किया। रथयात्राक
अद्वैताचार्यजीने प्रभुको निमन्त्रण दिया। निमन्त्रण देनेक
मेरे घरमें आते, तो मैं उन्हें अच्छी प्रकारसे खिलाता। भक्तवत्सल प्रभु उनक
दिन अन्यान्य संन्यासीलोग दोपहरक
लिए कहीं अन्यत्र गये थे। प्रभुकी इच्छासे उसी समय मूसलाधार वर्षा होने लगी और वे लोग वापस न आ सक
घर पहुँच गये तथा अद्वैताचार्यजीने भी उन्हें इच्छानुसार अनेक प्रकारक
प्रकार श्रीवास पण्डित, चन्द्रशेखर आदि जितने भी प्रधान-प्रधान भक्त थे, उन सभीने बारी-बारीसे प्रभुको निमन्त्रण प्रदान किया। चातुर्मास्यक
एक दिन प्रभुने नित्यानन्दप्रभुसे कहा—"श्रीपाद! सुनिये। मेरी आपसे एक प्रार्थना है कि आप प्रतिवर्ष नीलाचल मत आइये। बङ्गालमें ही रहकर चाण्डालसे लेकर ब्राह्मण तक सभीको नामप्रेम प्रदान करें, क्यों ऐसा दुष्कर कर्म आपक
कोई भी नहीं कर सकता।"

यह सुनकर नित्यानन्दप्रभु कहने लगे—"प्रभो! मैं तो क

देहसे प्राण अलग नहीं रह सकते। परन्तु आप अपनी अचिन्त्य शक्तिक
सकते हैं। अतः आप मुझसे जैसा करवायेंगे, मैं वैसा ही करूँगा।" ऐसा कहकर प्रभु श्रीगौरसुन्दरने उन्हें तथा बङ्गालक
किया।

क
प्रभुसे पूछा—"हे प्रभो! आप कृपापूर्वक बताइए कि हमारा कर्तव्य क्या है?"

सुनकर प्रभु कहने लगे—"आप लोग सब समय वैष्णवसेवा एवं नामसंकीर्तन कीजिए। इसीसे आपको श्रीकृष्णक
जायेगी।"

यह सुनकर उन्होंने पुनः पूछा—"वैष्णवोंको हम क

सुनकर प्रभु हँसते हुए कहने लगे—"जिनक मुखसे सब समय कृष्णनाम निकलता है, वे वैष्णव श्रेष्ठ अर्थात् मध्यम कोटिक
श्रीचरणकमलोंकी जी-जानसे सेवा करनी चाहिए।" अगले वर्ष पुनः जब उन्होंने ऐसे प्रश्न किये, तो प्रभुने उन्हें वैष्णवोंका तारम्य बताते हुए कहा—"जिसक
निकलने लगता है, वह 'वैष्णव-प्रधान' उत्तम अधिकारी है।"

इस प्रकार तीन वर्षोंमें प्रभुने उन्हें क्रमसे वैष्णव, वैष्णवतर, वैष्णवतम (कनिष्ठ वैष्णव, मध्यम वैष्णव, उत्तम वैष्णव)—इन तीन प्रकारक वैष्णवोंक
वैष्णवोंकी सेवा ही गृहस्थ भक्तोंका कर्तव्य है। श्रीमन्महाप्रभुक
जिन्होंने क
बार भी निरपराध होकर कृष्णनाम नहीं किया, उनक
क
चाहिए। (क्रमशः)

—श्रीपरमेश्वरी दास ब्रह्मचारी

श्रीगौड़ीय वेदान्त बुक ट्रस्टसे प्रकाशित नये ग्रन्थ

प्रेमप्रदीप

(ॐ विष्णुपाद श्रील भक्तिविनोद ठाक

श्रीजगन्नाथ-रथयात्रा

(ॐ विष्णुपाद १०८श्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज)

नामाचार्य श्रील हरिदास ठाक

(ॐ विष्णुपाद १०८श्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराज)

अपनी प्रति शीघ्र संग्रह कीजिए

श्रीधाम नवद्वीप परिक्रमा और श्रीगौर-जन्मोत्सव

कलियुग-पावनवतारी स्वयं भगवान् श्रीशचीनन्दन गौरहरिकी निखिल भुवन-मङ्गलमयी आविर्भाव तिथिपूजा (फाल्गुनी-पूर्णिमा) क उपलक्ष्यमें गौरधाम- गौरनाम-गौरकामका जगतमें प्रचार-प्रसार करनेवाले जगद्गुरु सच्चिदानन्द श्रील भक्तिविनोद ठाक
जगतमें संस्थापित करनेवाले जगद्गुरु ॐ विष्णुपाद १०८श्री श्रीमद्भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाक 'प्रभुपाद' क अन्तरङ्ग प्रिय पार्षद नित्यलीलाप्रविष्ट ॐविष्णुपाद १०८श्री श्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजकी अहैतुकी करुणा और शुभाशीर्वाद एवं श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति ट्रस्टके प्रतिष्ठाता-सभापति नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद १०८श्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराजजीकी प्रेरणासे ट्रस्टके वर्तमान सभापति-अध्यक्ष परिव्राजकाचार्य ॐ विष्णुपाद १०८श्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजीके आनुगत्य और पावन उपस्थितिमें श्रीधाम नवद्वीप स्थित श्रीश्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें ५ मार्च २००९ से ११ मार्च २००९ सात दिनों तक विराट महोत्सवका अनुष्ठान हुआ।

इस विशाल महोत्सव और धाम-परिक्रमाक आयोजनक
जन पश्चिम बंगालक
माससे श्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणीकी प्रचार-सेवामें व्यस्त रहे और घर-घरसे चावलकी भिक्षा की। इन प्रचारकोंमेंसे प्रमुख थे श्रीपाद भक्तिवेदान्त परिव्राजक महाराज, श्रीपाद भक्तिवेदान्त तीर्थ महाराज, श्रीपाद भक्तिवेदान्त जनार्दन महाराज, श्रीपाद भक्तिवेदान्त भारती महाराज, श्रीजीवप्रिय ब्रह्मचारी (श्रीपाद भक्तिवेदान्त विष्णु महाराज), श्रीकिशोरकृष्ण वनचारी (श्रीपाद भक्तिवेदान्त हृषीक
श्रीतमालकृष्ण ब्रह्मचारी, श्रीसाक्षीगोपाल ब्रह्मचारी, श्रीद्विजकृष्ण ब्रह्मचारी आदि।

२६ और २७ फरवरी २००९ को श्रील गुरुमहाराजने पश्चिम बंगालक
वनगाँव (श्रीमन्तपुर) में श्रीश्रीराधागोविन्द मन्दिरक विशाल प्रांगणमें लगभग पाँच हजारसे अधिक श्रद्धालु श्रोताओंको 'श्रीसनातन धर्म' क सम्बोधित किया।

५ मार्च को प्रातःकाल श्रीलगुरुमहाराजजीके आनुगत्यमें पतितपावनी गङ्गाजीके घाटपर संकल्पके साथ श्रीनवद्वीप धाम परिक्रमाका शुभारम्भ हुआ। ६ मार्चसे १० मार्च तक अभिन्न ब्रजमण्डल राधावन श्रीनवद्वीपधामके अन्तर्गत श्रीअन्तर्द्वीप (श्रीमायापुर), श्रीगोद्रुम द्वीप, श्रीमध्यद्वीप, श्रीकोलद्वीप, श्रीऋतुद्वीप, श्रीजह्नुद्वीप, श्रीमोदद्रुम द्वीप, श्रीरुद्रद्वीप, श्रीसीमन्तद्वीप आदि नौ द्वीपोंका दर्शन और उनक
नगर-संकीर्तन द्वारा सोलह क्रोश श्रीधाम-परिक्रमा की गयी। इस परिक्रमामें देश-विदेशसे लगभग अठारह हजारसे अधिक भक्त प्रत्यह सम्मिलित होकर श्रीहरि-गुरु- वैष्णवोंके कृपाभाजन हुए।

इस महदनुष्ठानमें प्रतिदिन श्रील गुरुदेवके आनुगत्यमें ट्रस्टके संन्यासी, ब्रह्मचारी तथा गृहस्थ भक्तों द्वारा हरिकथा, कीर्तन, आरती, प्रसाद परिवेषण आदि कार्यक्रम उत्तमरूपसे सम्पादित हुए। स्थानीय कलाकारोंने भी अपने सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किये।

११ मार्च पूर्णिमाक

जन्म-दिवसक

श्रीचैतन्य-भागवतका पाठ किया गया। सायंकाल श्रील गुरुमहाराजजीकी उपस्थितिमें अति उल्लासके साथ श्रीहरिनाम संकीर्तनके मध्य श्रीशचीनन्दन गौरहरिका जन्माभिषेक किया गया। इस उपलक्ष्यमें विशाल उत्सवका आयोजन किया गया, जिसमें हजारों लोगोंने सुस्वादु महाप्रसादका सेवन कर अपने जीवनको धन्य किया। इस परिक्रमामें जिन्होंने भाग लिया, जिन्होंने सेवा की अथवा किसी भी प्रकारकी सहायता की, वे श्रीशचीनन्दन गौरहरिक होंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

इस पावन दिवस पर देश-विदेशसे तीन सौसे अधिक लोगोंने श्रील गुरु महाराजजीसे श्रीहरिनाम और दीक्षा ग्रहण की। पाँच भक्तोंने श्रील गुरुदेवसे त्रिदण्ड-संन्यास ग्रहण किया। उनक नीचे दिये गये हैं।

	पूर्व नाम	परिवर्तित संन्यास नाम
(१)	श्रीमोतीकृष्ण ब्रह्मचारी—	श्रीभक्तिवेदान्त शान्त महाराज
(२)	श्रीजीवप्रिय ब्रह्मचारी—	श्रीभक्तिवेदान्त विष्णु महाराज
(३)	श्रीपर्जन्य ब्रह्मचारी—	श्रीभक्तिवेदान्त साधु महाराज
(४)	श्रीकिशोरकृष्ण वनचारी—	श्रीभक्तिवेदान्त हृषीक
(५)	श्रीरामचन्द्र वनचारी—	श्रीभक्तिवेदान्त भिक्षु महाराज

(निजस्व संवाद)

५ मार्च २००९ को श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठमें वैष्णव-मण्डलीको सम्बोधित करते हुए श्रील गुरुदेव

(ऊपर) ११ मार्च २००९ को श्रीगौर जन्मोत्सवक उपलक्ष्यमें श्रीगौराङ्ग महाप्रभुका महाभिषेक। (नीचे) परिक्रमाक समय नृत्य-कीर्तन करते हुए भक्तगण

११ मार्च २००९ को श्रीगौर जन्मोत्सवक
परिक्रमाक

९ मार्च २००९ को नवद्वीपक चम्पाहाटीमें परिक्रमाकारी भक्तगण

श्रीश्रीभागवत पत्रिकाक

(प्रपत्र–४, नियम–८)

१. प्रकाशनका स्थान—श्रीक
२. प्रकाशनकी अवधि—मासिक
३. प्रकाशकका नाम—त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज
पता—श्रीक
४. सम्पादकका नाम—त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज
पता—श्रीकेशवजी गौड़ीय मठ, मथुरा (उ. प्र.) नागरिकता—भारतीय
५. मुद्रक—त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज
६. उन व्यक्तियोंक
अधिकक

मैं त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वासक

मार्च, २००९ ह. त्रिदण्डिस्वामी श्रीमद्भक्तिवेदान्त माधव महाराज

वैष्णव-व्रतोत्सव तालिका

चैत्र कृ. ११	**२२ मार्च रवि.**	**पापमोचनी एकादशी व्रतोपवास।** (अगले दिन सूर्योदयक बाद और ९-४३ से पहले पारण)
चैत्र कृ. ३०	२६ मार्च बृह.	अमावस्या।
चैत्र शु. ५	३१ मार्च मंगल.	श्रीरामानुजाचार्यका आविर्भाव।
चैत्र शु. ९	**३ अप्रैल शुक्र.**	**श्रीरामनवमी व्रतोपवास।** (अगले दिन सूर्योदयक ९-३६ से पहले पारण)
चैत्र शु. ११	**५ अप्रैल रवि.**	**कामदा एकादशी व्रतोपवास।** (अगले दिन सूर्योदयक बाद और ९-३५ से पहले पारण)
चैत्र शु. १५	९ अप्रैल बृह.	पूर्णिमा। श्रीबलदेव प्रभुकी रासयात्रा, श्रीकृष्णकी वसन्त रासयात्रा। श्रील वंशीवदनानन्द गोस्वामी और श्रील श्यामानन्द गोस्वामीका आविर्भाव।
वैशाख कृ. ५	१४ अप्रैल मंगल.	श्रीक
वैशाख कृ. १०	२० अप्रैल सोम.	श्रील वृन्दावनदास ठाक
वैशाख कृ. ११	**२१ अप्रैल मंगल.**	**वरुथिनी एकादशी व्रतोपवास।** (अगले दिन सूर्योदयक और ९-२७ से पहले पारण)
वैशाख कृ. ३०	२५ अप्रैल शनि.	अमावस्या। श्रील गदाधर पण्डितका आविर्भाव।
वैशाख शु. ३	**२७ अप्रैल सोम.**	**अक्षय तृतीया। श्रीश्रीजगन्नाथदेवकी चन्दन-यात्रा,** श्रीबद्रीनारायणजीका द्वारोद्घाटन। श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिका प्रतिष्ठा-दिवस।
वैशाख शु. ९	३ मई रवि.	श्रीनित्यानन्दशक्ति जाह्नवादेवी तथा श्रीरामशक्ति सीतादेवीका आविर्भाव। श्रीमधु पण्डितका तिरोभाव।
वैशाख शु. ११	**५ मई मंगल.**	**मोहिनी एकादशी व्रतोपवास।** (अगले दिन सूर्योदयक और ९-१६ से पहले पारण)
वैशाख शु. १४	**८ मई शुक्र.**	**श्रीनृसिंह चतुर्दशी व्रतोपवास।** (अगले दिन सूर्योदयक और ८-४५ से पहले पारण)
वैशाख शु. १५	९ मई शनि.	पूर्णिमा। श्रील श्रीनिवास आचार्य प्रभु और श्रील माधवेन्द्र पुरीपादका आविर्भाव। श्रीपरमेश्वरी ठाक

श्रीश्रीभागवत-पत्रिकाक

हो गयी है, वे शीघ्र अपना देय मनीऑर्डरसे श्रीश्रीभागवत-पत्रिका कार्यालय, श्रीक गौड़ीय मठ, जवाहर हाट, मथुरा-२८१००१ (उ. प्र.) पते पर भेजें।